भारतवर्षीय पंचांग
की
विलक्षणता



संपादक
पंडित प्रेमशंकर दवे.

अमरावती
ता. १० मार्च ३९

भारतवर्षीय पंचांग की विलक्षणता.

धार्मिक व्रतोपवासादि, सामाजिक व्यवहार और लोक-व्यवहार के लिये ही पंचांग का उपयोग नही है, परन्तु इस का मुख्य उद्देश कालमापन या कालगणना का है यदि दैव योग से ज्योतिष शास्त्रका ज्ञान लोप हो जावे तो सैकडों क्या हजारों वर्षों के बाद भी मनुष्य आकाशकी ओर दृष्टि डालनेसे तारे अयनांशादि से यह बता सकेगा कि कितने हजार वर्ष व्यतीत हो गये, कौनसे वर्ष में कौनसा मास, पक्ष, तिथि, नक्षत्र, चंद्र आदि हैं और कितने बजे. इतने भारी उद्देश के लिये केवल तिथि की घटती बढती का झमेला ना कुछ चीज हैं सूर्य के प्रकाश के कारण आकाशके तारे ढक जाते हैं इस से मास, चंद्रमा के ऊपर से लेना पडा. मास कब लगा और कब पूरा हुआ इसके लिये अमावस्या और पूर्णिमा से बढकर आकाशमें नेत्र को सुखदाई और प्रत्यक्ष प्रमाण दूसरा नही हैं. इससे चांद्रमास लिये. इसके दोही भाग पक्षों (पखवाडा) में किये, सूर्योदय का उपयोग १५ पन्द्रह तिथि करने मे किया. तिथि का ज्ञान भी आकाश के चंद्र की कला देखने से हो जाता है; अष्टमी को आधा चंद्रमा, पूर्णिमा को पूर्ण, अमावस्या को लोप और घटबद में अन्य तिथि। सूर्योदय और सूर्यास्त पर से दिन (तिथि) के दो विभाग, दिन — रात, किये. सूर्य के ऊपर आनेसे दिनमें कितने बजे और चन्द्र पर से रात्रि की घडी जानी जाती है. सूर्य पर से उषः-काल, प्रातःकाल संगवकाल, माध्यान्हकाल, अपरान्हकाल, सायंकाल, प्रदोषकाल, इत्यादि दिन रात्रि के बडे बडे विभाग किये हैं. दिन के दो विभाग, सूर्य के सिरपर आजाने से किये. प्रत्येक के फिर दो विभाग तीन तीन घन्टे के प्रहर हुये. इतने काल का प्रहेरदार से एक पहरा लिया जाता था। संख्या मे ६० ऐसा अंक है कि जिस से २, ३, ४, ५, ६, १०, १२, १५,

२०, ३० का पूरा पूरा भाग चला जाता है, और दूसरी संख्या से भी यह संख्या कट जाती है. पृथ्वी अपने केन्द्रपर १७.३ मील (अथवा) स्थूल मानसे १८ मील) एक मिनिट में घूमती हैं, और सूर्य के आसपास एक सेकंड मे १८.५ मील के हिसाब से घूमती हैं. अर्थात् एक दूसरे से ६० गुने के हिसाबसे । संभव है कि इससे ही ६० घडी का एक दिन-रात माना हो. प्रति दिवस चंद्रमा ४८ मिनिट अर्थात् दो घडी बाद ऊगता है. उस पर से दो घडी को एक मुहूर्त माना. ये मुहूर्त त्रिपुरी के त्रिपुरासुर वध के काल से प्रचार मे आये.

(२) चांद्रमास २९॥ दिन का होता है, और सूर्य को एक नक्षत्र (योग तारा) से चलकर उसी नक्षत्र तक घूमकर आ जाने को ३६५। दिन लगते है. इस कारण ३० ही दिन का एक मास और द्वादश आदित्य के १२ ही मास का १ वर्ष हुआ. इस प्रकार सूर्य और चन्द्र दोनों पर से वर्ष का मिलान कर दिया. चान्द्र और सौर मास में प्रति वर्ष जो १० दिन का अंतर पडा, वह २॥-३ वर्ष में जाकर अधिक मास (लोंद का महिना) जोड कर फिर दोनो प्रकार के वर्ष एक साथ प्रारंभ कर दिये जाते हैं (चैत्र मास और मेष संक्रांति) । जिन को पंचांग, आकाशस्थ ग्रहों की स्थिति पर, निर्भर रखना है उनको इस के सिवाय गत्यन्तर ही नहीं है. यदि पूछो कि सूर्य और चंद्र दोनो के सौर + चांद्र वर्ष के मिलाने की आवश्यकता ही क्या थी तो यह याद रहे कि खेती, फल फूल, रोग, शरीर की बाढ़, मनोवेग, जहाज चलने के अनुकूल वायु, भूतल को वायु से साफ कर के वर्षा से धोकर उज्वल करने की ऋतु, मनुष्य, पशु, पक्षी, आदि सभी प्राणियों के विस्तार की सभी वस्तुएं सूर्य की गति पर निर्भर है. केवल चांद्रवर्ष से काम नही निकलता. सौर वर्ष के पहिले उत्तरायण और दक्षिणायण मार्ग परसे वर्ष के दो विभाग किये. सूर्य संक्रांति पर से मुख्य ग्रीष्म, वर्षा, और शरद, तीन

ऋतु चार चार माह की कीं और भी सूक्ष्म ऋतु प्रत्येक दो दो सूर्य संक्रांति की हुई. आकाश देखने से केवल ऋतु प्रवेश का ही ज्ञान पहिले से नहीं हो जाता है. परंतु नदी मे पूर कब आवेगा यह भी आकाश के तारे, व्याध आदि, देखकर जान लेते थे. खेती की बोनी, निंदाई, कटनी वगैरा सभी आकाशस्थ पंचांग पर अवलंबित हैं.

इस अधिक मास के मिलान पर से ही वैदिक कालमें 'पंचसंवत्सर मयं' युग ५ वर्ष का होता था। गुरु की मध्यम गति पर से ३६१ दिनका संवत्सर होता है। गुरु के उदय परसे भी संवत्सरका प्रारंभ होता था। गुरु और शनि के योग परसे ६० संवत्सर उपजे और उनका १ युग हुआ। फिर वही उपरोक्त सब १२ × ५ = ६० और ३० × १२ = ३६० का संबंध आगया। तत् पश्चात् सत् युगादि चार युग की ७२ चौकडी. कल्प, मन्वंतर, आदि भी प्रलय, महाप्रलय तक इन्ही ग्रह, नक्षत्र, तारों परसे बैठाये हैं।

(३) यह तो बात हुई काल विभाग गणना की। इन के नामाभिधान में भी भारतीय ज्योतिष शास्त्र के आचार्योंने वैसीही विलक्षण बुद्धि लगायी है। बार्हस्पत्य (गुरु) मान के ६० संवत्सर के जुदे जुदे नाम रखे गये। उन के फलानुसार, जो प्रभव विभव आदि अभी भी पंचांगों के पृष्ठ पर छपे रहते हैं वे वैदिक काल के पंचसंवत्सरों के भी नाम हैं जो अब प्रचार मे नहीं है। जैसे संवत्सर, परिवत्सर, इदावत्सर, अनुवत्सर और इद्वत्सर। चैत्र, वैशाख आदि महिनों के नाम नक्षत्रों पर से पडे हैं। जिस महिने में जो नक्षत्र संध्याकाल को ऊगता है और प्रातःकाल को डूबता है उस नक्षत्र परसे उस मास का नाम रखा गया है:—

महिना	नक्षत्र	महिना	नक्षत्र
चैत्र	चित्रा	आश्विन	अश्विनी
वैशाख	विशाखा	कार्तिक	कृत्तिका

जेष्ठ	जेष्ठा	मार्गशीर्ष	मृगशीर्ष
आषाढ	आषाढा	पौष	पुष्य
श्रावण	श्रवण	माघ	मघा
भाद्रपद	भाद्रपदा	फाल्गुन	फाल्गुनी

इन महिनों की पूर्णिमा को ये ये नक्षत्र प्राय: होते हैं। अर्थात् सायंकाल को पूर्ण क्षितिज की ओर मुख कर के देखो। जो नक्षत्र उदय होता दिखे वही मास। इसी तरह देखो कि पूर्ण चंद्र किस नक्षत्रपर हुआ वह या उसके समीपी नक्षत्र परसे कौनसा महिना है इसका ज्ञान हो जावेगा।

चंद्र की न्यूनाधिक कला देखकर प्रतिपदा, द्वितीया, एकादशी, पूर्णिमा, अमावास्या आदि तिथियों के सार्थक नाम रखे गये हैं. वारों के नाम भी ग्रहों परसे हैं. पृथ्वी के चारों तरफ ग्रह जिस क्रमसे फिरते हैं, उससे चौथा चौथा होरा का वार होता है. योग, करण के नाम उन के फलानुसार डाले गये हैं.

(४) आकाश में चंद्र का एक फेरा २७। दिन में होता है. इसी परसे नक्षत्रमाला के २७ अथवा २८ विभाग किये. उनको " नक्षत्र " कहा. तारों की आकृति पर से इन नक्षत्रों के नाम रखे गये. वैसे ही राशि के तारों की आकृति पर से राशी के। प्रातःकाल को जिस दिन जिस ग्रह का 'होरा' पड़ता है उससे ७ ग्रहों के ७ वार और १ हसा हुआ. सूर्य से चन्द्र के अंतर को 'तिथि' कहते हैं. और तिथि के आधे को 'करण' कहते हैं. सूर्य चंद्र के भोग के जोड़ को 'योग' कहते हैं. इन सब का बोध साक्षात् आकाश देखने से प्रत्यक्ष होता है. कागज पत्र के पत्रा पंचांग का प्रयोजन तो हीन पक्ष है.

(५) जागती अवस्था में उजेला दिखे तो शुक्लपक्ष और अंधेरा दिखे तो कृष्णपक्ष है. उलट-पुलट बताने वाले भी पंचांग हैं, और जो

तिथि की घटा बढी के झमेले से बचकर चलना चाहते हैं उन लोगो मे ही खासे चालू भी हैं, जैसे: —

सितंबर	—	सप्तम मास	नववा गिना जाता है.
अक्टोबर	—	अष्टम ,,	दसवा ,, ,,
नवंबर	—	नवम ,,	ग्यारवा ,, ,,
दिसंबर	—	दशम ,,	बारवा ,, ,,

नया संवत्सर १ जनवरी को प्रारंभ होता है, तब सूर्य सायन मकर के १० अंश हो जाते हैं और, निरयन धनु के १६ अंश। कोई भी मास न सूर्य संक्राति से मिले, न चन्द्र पर से। बड़ा दिन २१—२२ दिसंबर को होता हैं, पर माना जाता है २५ दिसंबर को. रशिया में आज भी बड़ा दिन ५ जनवरी को होता है. इन महिनों के पखवाडे और हसोंका आकाशस्थ चंद्रकला से कुछ संबंध नहीं जुड़ता. वर्ष अलबत्तः ३६५। दिन का "सौर" है जो कि हर चौथे वर्ष और २०० वर्ष में फरवरी के घटाबढ़ी से मिला लिया जाता है. अर्थात् केवल वर्ष का संबंध आकाशसे है मास, पक्ष, दिन, घंटे का नहीं, ६० सेकंड का १ मिनिट, ६० मिनिट का १ घंटा फिर ६० घंटे का एक दिनरात के बदले २४ घंटे ही कर लिये. घड़ी (घटी दंड–घटिका) और घंटे में भी पूरा पूरा भाग नहीं जाता है. (२॥ घडी का १ घंटा). सूर्योदय होता है तब १ से न गिन कर एकदम ६ बज जाते हैं. भला अर्ध रात्रि से विशेष सुविधाकारक और विश्वसनीय सूर्य का क्यों त्याग किया? करांची में सूर्य जब माथे पर आते हैं, तब १२ के बदले १ बजे माने जाते हैं. इसी प्रकार सूर्योदय और सूर्यास्त के काल में झमेला पडता है. भारतवर्ष भर मे एक टाईम रखना तो परमावश्यक है, परंतु सूर्योदय का काल जो आंख से दिख पड़ता है क्यों छोड़ा जाता है; छोडकर भी फिर घडी, रेल, तारघर जाकर बिना मिलाये निर्वाह नही होता. जगह जगह (Lighting time) दिया लगाने का टाईम जुदा लिखना

पड़ता है. (भारतीय ज्योतिषी (hour) " अवर " (घंटे) की उपपत्ति " होरा " से बतलाते हैं.) इतने कम झमेला वाले, कृत्रिम और कल्पना युक्त कॅलेंडर से भी पाश्चात्य व्यापारी वर्ग उकता उठे हैं. जो कि ५२ हप्ते और ३६५। दिन का ठीक ठीक पूरा भाग नहीं जाता लीग ऑफ नेशन्स (League of Nations) में यह प्रश्न उठाया गया है. कोई कहते हैं कि कुछ इकट्ठे दिवस गड़प्प कर जाओ. कोई कहते हैं कि हर साल एक दिन गायब मानो. अथवा ३६४ दिन का ही वर्ष सही. कोई १० महिने का वर्ष प्रचार में लाने उद्यत हैं, और कोई हप्तों पर अवलंबित रह कर २८ दिन के बराबर सब मास चाहते हैं. ईस्टर की तारीखें हर साल न बदलें हमेशा के लिये तारीखें निश्चित कर दी जावें। ९१ दिन की एक तिमाही का पहिला मास ३१ दिन का दूसरे ३०—३० दिन के माने जावें और कॅलेंडर ऐसा हो कि वार + तारीखें उसी उसी दिन पड़े। इंग्रेज सरकार का मत भी उपरोक्त के अनुसार है. वे रविवार को नया संवत् अर्थात् वर्ष प्रतिपदा प्रारंभ करके शनिवार को संवत्सर की समाप्ति करना पसंद करते हैं। १ जनवरी १९३९ से ये संशोधित कॅलेंडर प्रचार में लानेवाले थे।

यह "कठिन" समस्या (League of Nations) लीग ऑफ नेशन्स मे आज ८—९ वर्ष से हल हो रही है. देखो यह सर्वव्यापी कॅलेंडर जो केवल सौर वर्षमान आकाश से लटका है. वह भी इस भौतिक और ज्योतिष शास्त्र के उन्नत काल में—रहता है कि जाता है ? भारतवर्षीय ज्योतिषी भी दुराग्रह मे पड़े हैं. अपनी आंख की फुली न मिटाई तो कहीं टेंट न पड़ जाय. अपने पंचांगों में उत्तरायण, दक्षिणायण और सभी ऋतुओं मे २३ दिन का अंतर पड़ता है. पंचांगों में निरयन के साथ साथ सायन भी ऋतु लिखें, ता कि खेती करने वाले और वैद्य लोग

धोखे में न पड़ें— यदि अंधश्रद्धालु वैद्य उन के ही पंचांगानुसार वात, पित्त, कफ का उद्भव २३ दिन आगे पीछे मान उन की औषधि करें तो अनर्थ हो जाने की संभावना है. प्यासे को ठंडे पानी की प्याऊ भी २३ दिन तक हाथ न लगे, क्यों कि अब वैशाख— जेष्ठ की धूप और सावन— भादों का पानी प्रसिद्ध है. पंचांग में कुछ भी लिखा रहे. और भी क्या क्या अनर्थ होते हैं. और आगे होने की संभावना है ये अन्यत्र लिख चुके हैं.

(६) अपने पंचांग में कई विषेशतायें हैं. ज्योतिष शास्त्र के राशि चक्र आदि प्रदेश के भाग विभाग हैं। ठीक वैसे ही और उतने ही विभाग काल के भी किये हैं. जैसः—

१ भगण अर्थात् राशि चक्र	=	१ वर्ष
१२ राशि	=	१२ मास.
३० अंश	=	३० दिन.
६० कला	=	६० घटी.
६० विकला	=	६० पल.

नक्षत्रों पर से ठीक ठीक समय का ज्ञान रात्रि में तो होता ही है, परंतु आकाश में क्रांतिवृत्त और विपुववृत्त कहां से कहां तक गये हैं, यह भी जान सकते हैं. क्रांतिवृत्त के बराबर ४ विभाग पर रोहिणी, मघा, जेष्ठा और कोमल, ये ४ प्रकाशित तारे हैं. रोहिणी, पुनर्वसु, मघा, चित्रा और ज्येष्ठा में से होकर क्रांतिवृत्त जाता है. "त्रिकांड, बाण, मीशर्द्रा, गरवा, चित्रा, जान। मघा, श्रवण, एलफर्ड, अठ विपुववृत्त के मान" ॥ पूर्व पश्चिम उत्तर दक्षिण दिशायें विना दिक् साधन किये ही जान पडती हैं. हिमी के तारका पुंज [मृग और व्याध] में व्याध से एक लाइन मे जो ३ प्रकाशित तारे हिरण के पेटमें हैं वे तारे ठेठ पूर्व में ऊगते हैं और पश्चिम में अस्त होते हैं. ध्रुव

मत्स्य और सप्तर्षि से उत्तर दिशा का ज्ञान, और अगस्त्य से दक्षिण दिशा का ज्ञान प्रसिद्ध ही है. रेखांतर और अक्षांश [चर] से संस्कृत पंचांग और आकाशस्थ ज्योति की सहायता से ज्योतिषी को सर्वदा ये हवस रहती है कि वह यह पता लगा सके कि निर्दिष्ट कालपर वह भूपृष्ठ के अथवा समुद्र के ठीक किस भाग पर स्थित है.

(७) पंचांग शोधन अथवा दिक् साधन के लिये ही मिसर देश के राजाओं ने ३० अक्षांश पर पेरेमिड बनाये और उन में रखे हुए छिद्र में से सीध लगाकर ध्रुव तारा देखते थे. फीनीशियन लोक भी नाव चलाने में ध्रुव मत्स्यपर से उत्तर दिशा का ज्ञान कर लेते थे.

लाखों करोडों वर्ष की घटना पंचांग के आधार पर से जान सक्ते हैं. पुराणों में यह लिखा है कि पहिले कोई दूसरा तारा ध्रुव के स्थान पर था; ततपश्चात् उत्तानपाद का पुत्र " ध्रुव " हुआ. अब वह भी अपने स्थान से १ अंश च्युत हो गया है. शके १४००० के लगभग अभिजित का तारा ध्रुव की गादीपर बैठेगा और अगस्त्य दक्षिण ध्रुव होंगे. (१० अंश के अंतर से) आज से १४००० वर्ष पहिले अभिजित् ध्रुवस्थान में था. विष्णु पुराण में कथा है कि आगे के मन्वंतर में ये सप्तर्षि हटकर उन का स्थान दीप्तमान गालव, राम—कृप—द्रोण पुत्र—अश्वत्थामा—व्यास—ऋष्य शृंग लेवेंगे. पंचांग की ग्रह स्थिति पर से यह जान पड़ता है कि सत् युग कलि-युग आदि युगों का प्रारंभ कब हुआ—जब सब ग्रह, मंगल की राशि मेष में एकत्र थे तब वर्तमान कलियुग का प्रारंभ हुआ. यह, पाश्चात्य ज्योतिषियों ने भी गणित से सिद्ध कर लिया है. फिर ठीक ५००० वर्षबाद मंगल की दूसरी राशि वृश्चिक में सप्तग्रही संवत् १९५६ में आई। कलियुग के ५००० वर्ष बीतने पर गंगा का माहात्म्य घट कर नर्मदा का बढ़ेगा, यह पहिले से

भारत वर्ष में प्रसिद्ध था ही—ये सब अगर कलियुग के प्रारंभ और कलि के ५००० वर्ष गत होने पर की ग्रहस्थिति पर से नहीं निश्चय किया था, तो काहेपर से किया होगा ?

ईसवी सन् २००० के पहिले खग्रास सूर्य ग्रहण पड़ना बंद हो जावेगा. अंतिम खग्रास सूर्य ग्रहण ३ आक्टोबर सन १८९६ को पड़ेगा. कुछ काल पहिले खग्रास सूर्य ग्रहण अंतरिक्ष में पड़ते थे. १२ हजार वर्ष के बाद पृथ्वी पर पुन: पड़ने लगते हैं. ऋग्वेद संहिता ५ - ४० (सौर सूक्त) से ज्ञात होता है कि सूर्य ग्रहण या खग्रास सूर्य ग्रहण का ज्ञान अत्रि ऋषि को तुरीय यंत्र से हुआ था. अब पहिले पहल खग्रास सूर्य ग्रहण पडना भारतवर्ष में कब प्रारंभ हुआ यह गणित से जानकर अत्रि ऋषि के इस शोध का काल निकाल सक्ते हैं. पंचाग की ग्रहस्थिति पर से जो जन्म कुंडली बनती है उसके कई हजार वर्ष बाद भी इस मनुष्य का जन्म कब किस मास, पक्ष, तिथि और कितने बजे हुआ आज भी बतला सक्ते हैं. गणित सिर्फ वर्ष समूह निकालने को करना पडता है. भारतवर्ष की कई घटनाओं का विश्वसनीय समय इतने दीर्घ काल के भी पश्चात् निकाला जा सकता है. जैसे महाभारत के ग्रहण १३ दिन का पक्ष, दशरथजी के समय शनिका रोहिणी शकट भेद, दक्ष प्रजापती का यज्ञध्वंस, अगस्त्य ऋषि का विंध्याचल उल्लंघन कर दक्षिण में वास, पुराण इतिहास में की और भी कई बातें, यह सब भारतवर्षीय उसी श्रेष्ठ प्रणाली का फल स्वरूप है जिसने " आकाश " और " पंचाग " तन्मय कर दिये हैं.

(८) इस कालज्ञान में ही नहीं, परंतु भारतवर्ष के सभी विषयों में स्वाभाविक प्रकृति की वस्तुओं पर से माप तोल लिया है, न कि कल्पित और कृत्रिम पदार्थों पर से । जैसे द्रव्य के छोटे से छोटा सिक्का कौडी था, और क्रमशः काकिणी से पण, द्म्म (दाम्ह) और निश्क तक ! इसी तरह तोल म दो जब का एक गुंजा से लेकर मासा, कर्ष और पलतक, दूरी मापन के

लिये आठ यवोदर अथवा अंगुल से हाथ, कोस ओरे योजन तक; धान्यादि में भी एक हाथ का वर्ग धन, मूल, काम में लाया गया है, उसी से आढक द्रोण, टंक, सेर और मन निकले हैं. कालमापक परिभाषा में आखों के पलक गिरने में जो समय लगता है, उससे प्रारंभ किया है. ऐसे दो निमेष की एक त्रुटि, तदुपरांत क्रमशः प्राण, पल, घटी आदि स्थिर किये हैं. वैसे ही १८ निमेषकी काष्टा और ३० काष्ठा की कला होती है. दस गुरु अक्षर बोलने में जो समय लगता है उसे असु (प्राण) कहते हैं. ६ असुओंका एक पल और साठ पल का एक दंड (घड़ि) आदि. सांप्रत की छुट्टियां वगैरः भी कृत्रिम काल पर नियम की गई हैं. पुराने काल मे अनध्याय हर अष्टमी, पूर्णिमा और अमावस्या को रहता था. पखवाड़े में चतुर्दशी और प्रतिपदा को भी अनध्याय कर के लगातार प्रतिपक्ष में तीन छुट्टियां हो जातीं थीं. अर्थात् एक चांद्रमास मे आठ दिन. आज भी अमावास्या को बाजार बंद रहा करता है. जिस तरह पाठशालाओं में इन्स्पेक्टर आदि के आगमन के कारण छुट्टियां हुआ करती हैं, इसी तरह पुरातन काल से भी " शिष्टागमने अनध्यायः " की चलन थी.

पारसी पंचाग.

पारसीओं का वर्ष " सौर" है. प्रत्येक मास के ३० दिन होते हैं. वर्ष के अंत मे ५ दिन जो " गाथा धूमवर्स " कहते हैं, जोडकर ३६५ दिन का सौर वर्ष हो जाता है. प्रतिवर्ष ६ घंटे छूट जाने से १२० वर्ष में पूरे १ मास का अंतर पड़ जाता है. इस से हर १२१ वर्ष वह मिलान कर लिया जाता है. इसे " कबीसा " कहते हैं हैदराबाद-दक्खन-में इस प्रथा के अनुसार ५ मरतबे हर १२० वर्ष के अंत में " कबीसा " का संस्कार किया गया है. " कदमी " और " शहनशाही " मत के पंचाग में ऋतुओं का बहुत अंतर पड़ता है. दस्तूर जा मापस विलायती ने ईरान से आकर भारत देशीय पारसीओं को यह बतलाया कि पारसी पंचाग ठीक १ महिने

पीछे है, जिससे कि अनेक धार्मिक त्यौहार ठीक समयपर नहीं होते हैं. और न प्रार्थनाओं से मनोवांछित सिद्धि होती है. बहुत कुछ जांच पडताल ईरान मे करने के बाद और वहां एक दूसरे दस्तूर आनेपर बहुत से भारतीय पारसीयों ने ईरानी पंचांग मान्य किया. यह बात १७ जून १७४५ ई० में हुई, और इस पंचाग का नाम ' कदमी पंचांग ' पडा. परंतु दुराग्रह से अधिकतर भारतीय–पारसी अपने पुराने पंचागों कोही अपनाते रहे. इसको रस्मी अथवा " शहनशाही " पंचांग कहते हैं. धार्मिक त्यौहारों के काल बदलने से आपस में वादविवाद फैला और दस्तूर भी जुदे हो गये हैं. इस झगडे का मूल प्रत्येक १२० वर्ष मे एक अधिक मास न जोडने में था

सन १८२६ से १८३० तक इस विषय पर पुस्तकें लिखी गयीं. सन १९२७ में पारसी पंचायत बंबई ने एक कमेटी बैठाई. पारसीयों में दो " गहनवार " त्यौहार उस दिन माने जाते हैं, जिस दिन दिनमान सबमे अधिक और सब सें छोटा हो. सूर्य की गति से इन दिनों का निश्चित करना कोई बडी बात नहीं थी. परंतु उनके और हिंदूओं के पितृपक्ष " राज रोजगर " एक ही पखवाडे में पडना चाहिये. अखबारों से पता चलता है कि सन १९३७ और १९३८ में इस विषय मे फिर आंदोलन उठा था ' जमशेदी नवरोज " जिस दिन, दिन रात बराबर हों अर्थात २१ मार्च को होना चाहिये. परंतु हिंदुओं के समान अभी पारसीयों में भी दुराग्रह है. इस मत मतांतर के कारण उन लोगों में तीन तट हो गये और इस विषय पर अभी कोई निर्णय नहीं हुआ. कई लोगों का मत है कि १२० वर्षतक बाट न देखकर हर चौथे वर्ष–प्रति वर्ष के ६ घंटे के हिसाब से १ दिन जोड दिया जावे. फसली मत के अनुसार पारसीयों का नया संवत्सर " नवरोज " २१ मार्च को बैठता है. " शहनशाही मतवाले ७ सितंबर को मानते हैं और ' कदमी ' मतानुयायी शहनशाही से १ मास आगे ही मनाते हैं. अर्थात् ७ अगस्त को २१ मार्च और २१ सितंबर को वसंत और शरद संपात होता है. दिन रात बराबर होते हैं. इन दोनों

मे से धार्मिक ग्रंथों में जो अधिक मेल खाता हो उस को ग्राह्य करना श्रेयस्कर है.

मुसलमानी जंत्री.

मुसलमान लोगों का पंचाग ' चांद्र-सौर ' नहीं है, केवल ' चांद्र ' है. इंग्रेजों का कॅलेंडर शुद्ध ' सौर ' है. मानव जाति में ६३ फीसदी ' चांद्र-सौर ' पंचांग मानते हैं. विशेष करके एशिया और आफ्रिका के लोग संसार में १०० से अधिक ' चांद्र सौर ' वर्ष के पंचांग प्रचलित हैं. केवल मुसलमानों का वर्ष १२ ' चांद्र मास ' का एक ' चांद्र वर्ष ' होता है. मुसलमान लोग जंत्री और ' चांद्र-सौर ' के झमेले में न पड़के " चंद्रार्कौ यत्र साक्षिण्यौ " इस न्याय से आकाश में प्रत्यक्ष चांद देखकर अपने मास और तिथि आरभ कर लेते हैं. इनको न मोहर्रम की १० वीं तारीख न रोजा, न ईद, न चाहरम वगैरा की तिथि मुल्लाजी से पूछना पड़े. न जंत्री को ढूंड़ते फिरने का काम पड़े. सब त्यौहार उचित समयपर प्रत्यक्ष आकाश देख कर मनाये जाते हैं. रेखांतर और चर संस्कार से भी कुछ वास्ता नहीं रहता है. ' चांद्र वर्ष ' का ' सौर ' वर्ष से मिलान न करने से मोहर्रम के ताजीयों की तिथि हरेक ऋतु में पडती है. जिस ऋतु में लड़ाई हुई थी, उसी ऋतु में पड़ना चाहिये था. इस कारण एन बरसात में पानी की मशक का प्रयोग ताजीयों के सामने करते देखे जाते हैं। मुसलमानी सल्तनत् के बादशाह और दूसरे देशों के बादशाह जो समकालीन भी होते हैं, उन के इतिहास की तारीखें कुछ हजार वर्ष बाद नहीं मिलतीं। दोनों मे प्रतिवर्ष १० दिन का अंतर पड़ने से हजारों वर्ष में कई वर्ष का अंतर पड़ जाता है। उन्होने वार की प्रवृत्ति सायंकाल से, जब सब लोग जागृत रहते हैं, सूर्यास्त पर से की है. इस कारण से बृहस्पतिवार की रात्रीं को जुमेरात और शुक्रवार के दिन को ' जुम्मा ' कहते हैं. इन्होने सौर जंत्री कई दर्जे से छोड़ी. परंतु आकाश का देखना जारी रखा है, यह सराहनीय है.

प्रकृति में भूगोल के आसपास सर्वव्यापी आकाश है तथापि भारतवासी, पंचांगों के झमेलों से ऊबकर आकाश का संबध छोड़ देने की चेष्टा न करें, यही ईश्वर से प्रार्थना है.